ALLAMA SHAMSI RESEARCH ACADEMY

रिसाल-ए-दुआ

RISALA-E-DU'A

The book of invocation

(English and Hindi Version)

By
Haz. Bahrul uloom Allamah
Syed Ashraf Shamsi *(RH)*

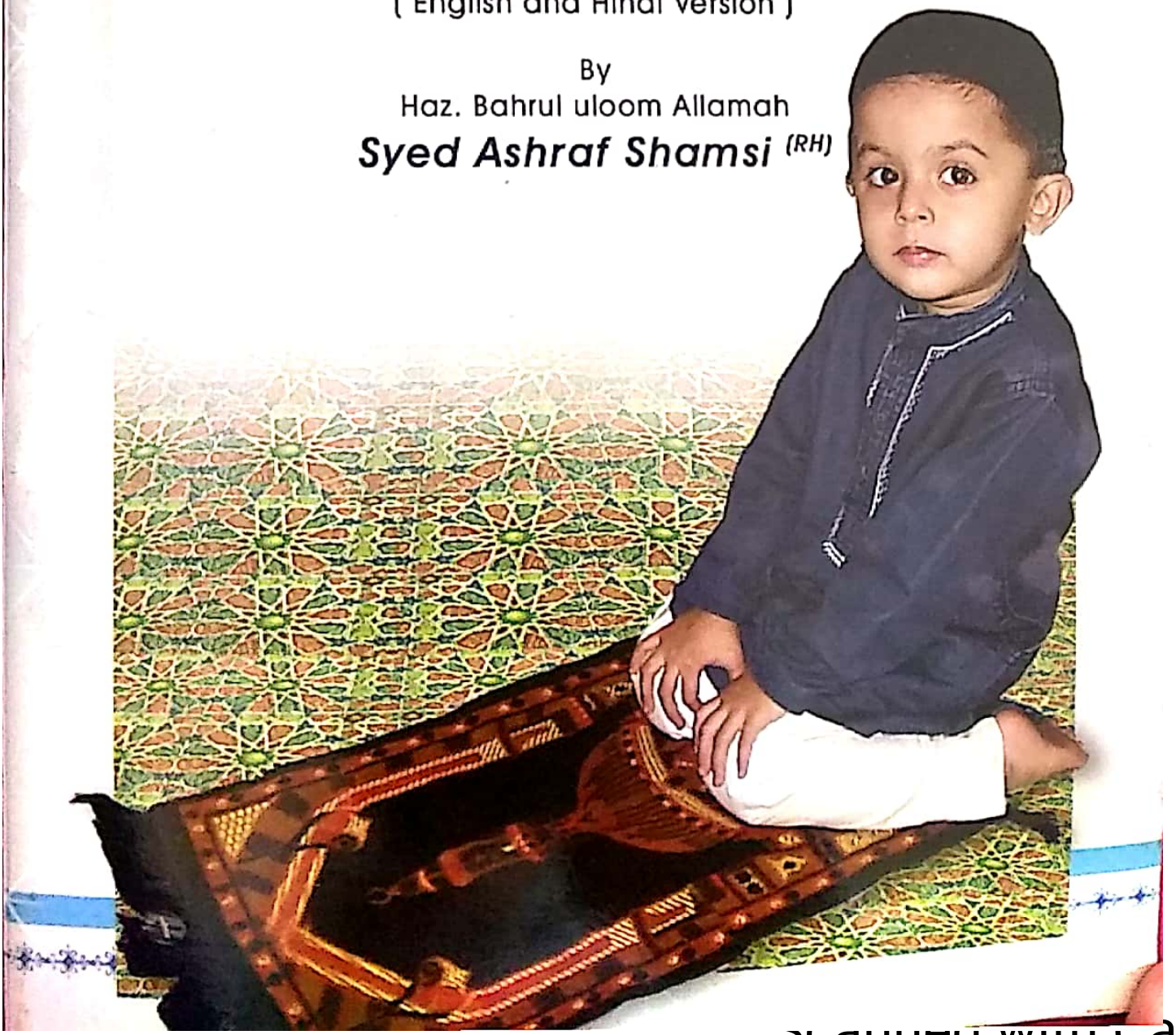

Scanned with Cam

रिसाल-ए-दुआ

बहरूल उलुम अल्लामा

सैयद अश्रफ़ शम्सी

अनुवादक

शेख़ चाँद साजिद

एम. ऐ, एम. फ़िल (उस्मानिया)

अल्लामा शम्सी रिसर्च अकाडमी

1-6-806, महेदी मन्ज़िल, दायरा मुशीराबाद, हैदराबाद - 500 020.

Scanned with Cam

प्रस्तावना

सारी प्रशंसा अल्लाह तआला के लिये है जो इस जगत का पैदा करने वाला है और दरूद व सलाम ख़तिमैन अलैहिमस्सलाम पर और उनकी सन्तान और अस्हाब पर।

यह अल्लाह तआला की कृपा है कि मुझे अपने दादा हज़रत अल्लामा बहरूल उलूम अश्रफ़ुल् उलमा सैयद अशरफ़ शाम्सी रहे० की रचित पुस्तकों की रक्षा और प्रकाशन का साहस और क्षमता दी। इसी लक्ष्य की ओर आगे बढ़ते हुवे अल्लामा शम्सी रिसर्च अकाडमी ने अब तक दस रचनाऐं प्रकाश्ति की है और अब रिसाल-ए-दुआ उर्दू और उसका हिन्दी अग्रेजी मे अनुवाद, यानी तीनो भाषा में एक ही पुस्तक प्रकाश्ति किया जारहा है। ताकि उर्दू से अपरिचित लोग लाभ उठा सकें। यह अनुवाद जनाब सेख़ चाँद साजिद ने किया है जिन्हों ने अल्लामा शम्सी रहे० पर रिसर्च किया और एम. फ़िल की डिग्री हासिल की। दुआ के विषय में विवाद है। बाज़ लोग फ़र्ज़ नमाज़ के बाद हाथ उठाकर दुआ करना जरूरी समझते है और जो ऐसा नही करते उनपर ऐतराज़ करते है, जबकि सज्दे में दुआ करना सही और उचित तरीका है। इस पुस्तक में सज्दे मे दुआ करने की उत्तमता और महत्व को समझाया गया है।

रिसाल-ए- दुआ का यह हिन्दी अनुवाद १९९६ में मर्कज़ी अंजुमने महदवियह हैदराबाद ने प्रकाशित किया था जो दूसरी बार अल्लामा शम्सी रिसर्च अकाडमी की और से प्रकाशित किया जारहा है।

अल्लाह तआला से दुआ है कि हमारा प्रयास सफल हो और यह पुस्तक आपके लिये लाभ दायक साबित हो - *आमीन*

२५. शव्वाल १४२५ हिज्री
७ जनवरी २००५

सैयद यदुल्लाह शजी यदुल्लाही
अध्यक्ष अल्लामा शम्सी रिसर्च अकाडमी

Scanned with Cam

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

रिसाल-ए-दुआ

इस ज़माने में बाज़ लोगौं का यह ख़याल है कि फर्ज़ नमाज के बाद दूआ वाजिब है, वर्ना नमाज़ दुरूस्त नहीं होती। मेरे ख़याल में यह क़ौल (विचार) बहुत ही कमज़ोर है, क्यों कि फ़र्ज़ नमाज़ के बाद जो दुआ होगी वह ज़ाहिर है कि नमाज़ के सिवा (अतिरिक्त) है, इस लिये जो अमल नमाज़ के अरकान, फ़राइज़ और वाजिबात से ख़ारिज (अलग) है, उसके करने से नमाज़ की तक्मील और न करने से नमाज़ की तन्क़ीस (अपूर्णता) महज़ ख़याली ढकोसला है जिस पर कोइ दलील व बुरहान (तर्क) क़ाइम नहीं हो सकती। वाज़ेह हो कि दुआ की तीन क़िस्में हैं।

१. वाजिब : दुआ की पहली क़िस्म *वाजिब* है जो नमाज़ की हर एक रकात में की जाती है, *इहदिनस सिरातल मुस्तक़ीम* (हम को सीधा रास्ता दिखा)। इस दुआ की तालीम ख़ुद अल्लाह तआला ने की है, और इसी लिये रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया: *अफ़्ज़लुद दुआ अल्हम्दु लिल्लाह* यानि सूरए फ़ातिहा सब से अफ़ज़ल दुआ है।

२. सुन्नत : दूसरी दूआ *सुन्नत* है जो दुरूद के बाद पढ़ी जाती है और जिस में इस्तिग़फ़ार और तअवुज़ है।

३.मुस्तहब : इनके सिवा जो दुआएं हैं वह *मुस्तहब* हैं, लेकिन अक्सर उलमा की यह राय है कि आख़िर की दोनों क़िस्में मुस्तहब हैं। जैसा कि अल्लामा नववी ने लिखा

Scanned with Cam

है : और अक्सर उलमा की यह राय है कि यह मुस्तहब हैं वाजिब नहीं।

इस सूरत में दुआ को छोड़ने से कोई शख़्स न तो गुनाहगार होता है और न ही उसकी नमाज़ साक़िस (अपूर्ण) होती है, यानि नमाज़ के वाद हाथ उठाकर दुआ न करने से नमाज़ साक़ित या नाक़िस नहीं होती क्यों कि यह फ़ेल (काम) नमाज़ के बाद का है और मुस्तहब है।

अल्लामाह इब्ने क़ैयिम ने किताब *"हुदा-अन-नबवी"* में लिखा है कि क़िबले की ओर मूहँ करके नमाज़ के बाद दुआ करना नबी अले० की सुन्नत नहीं है और इस बात पर हज़रत सल्ला० से कोइ सहीह या हसन हदीस भी बयान नहीं की गई है, और कुछ लोगो नें फ़ज्र और असर की नमाज़ में दुआ करने की तरग़ीब दी है मगर यह ऐसी चीज़ है जिस को रसूलुल्लाह सल्ला० और ख़ुलफ़ाए राशिदीन ने नही किया और न इस काम की हिदायत (आदेशा) अपनी उम्मत को की है, बल्कि यह इस्तिहसान है। बाज़ लोगैं ने सुन्नत के बदले में यह अमल किया है।

अर्थात इस क़ौल (वर्णन) से ज़ाहिर है कि नमाज़ के बाद दुआ करना रसूलुल्लाह सल्ला० की सुन्नत और ख़ुलफ़ाए राशिदीन के अमल से साबित नहीं है बल्कि यह केवल कुछ लोगों की राय (विचार) है जो दलील व बुरहान से क़वी नहीं है।

ख़ुलूस के साथ छिपा कर दुआ करना

क़ुरआन शरीफ़ इस बात की शिक्षा देता है कि दुआ ख़ुलुस (निष्कपटता) के साथ छिपा कर की जाए, जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है: *उदऊ रब्बकुम तज़र्रुं अंव व ख़ुफ़ियतन* (तुम अपने रब को नम्रता से और छिपा कर पुकारो)।

Scanned with Cam

बैज़ावी (मृत्यु ६८५ हिज्री / १२८६ ईसवी) ने इस आयत की तफ़्सीर में लिखा है कि छिपाकर दुआ करना इखलास की दलील है।

इमाम फ़ख़रूद्दीन राज़ी (मृत्वु ६०६ हिज्री) ने *तफ़सारे कबीर* में वयान फ़रमाया है कि दुआ मे पक्की बात यही है कि वह छिपाकर की जाए और इसके कई कारण हैं। पहली वज्ह यह है कि यह आयत इस बात को साबित करती है कि अल्लाह तआला ने छिपाकर दुआ करने का आदेश दिया है, और अम्र के सेग़ों (आदेशात्मक रुप) से ज़ाहिरन यही बात मालूम होती है कि उनसे वुजूब (अवश्यकरणीय) मक़सूद (उद्देश्य) होता है। अगर वूजूब न हो तो कम से कम मन्दूब तो ज़रूर होगा। फिर अल्लाह तआला यह भी फ़रमाता है कि वह हद से गुज़रने (सीमोल्लंधन करने) वालों को नहीं चाहता। इस से यह बात मालूम होती है कि वह उन लोगौं को नहीं चाहता जो दोनों हुक्म यानि आजिज़ी (नम्रता) और इख़्फ़ा (गुप्ति) के साथ दुआ नहीं करते। अल्लाह तआला की मुहब्बत से सवाब मुराद है तो इस आयत के यह माने होजायेंग कि जो लोग आजिज़ी से और छिपा कर दुआ नहीं मांगते हैं अल्लाह तआला उनको सवाब (पुण्य) नहीं देगा और उन पर एहसान (उपकार) नहीं करेगा और जो शख़्स इस सिफ़त से मौसूफ़ होगा वह क़ाबिले अज़ाब होगा क्योंकि उसने अल्लाह तआला के उस हुक्म की पर्वाह नहीं की। अतः अल्लाह तआला का फ़रमान *इन्नहु ला युहिब्बुल मोतदीन* (बेशक वह हद से गुज़रने वालों को नहीं चाहता) उन लोगों के लिये बड़ी सख़्त धम्की है जो दुआ को छिपाकर और आजिज़ी के साथ नहीं करते।

तफ़्सीरे कबीर की इबारत (लेख) से यह मालूम होता है कि दुआ के समय ख़ुलूस (निष्कपटता) और इख़्फ़ा (गुप्ति) की सख़्त ज़रूरत है क्यों कि अल्लाह तआला ने दुआ करने का तरीक़ा यही बताया है, इस लिये दुआ

Scanned with Cam

के समय इन दोनों चीज़ों का ख़याल रखना और उसी पाक तालीम के मुताबिक़ दुआ करना कम से कम मन्दूब (अधिकरित) है। अव ग़ौर करने की बात यह है कि हाथ उठाकर तुआ मांगने की सूरत में मज़कूरा (चर्चित) दोनों फ़रमानौं (आदेशों) की तामील (आज्ञा पालन) होती है या नहीं। ज़ाहिर है कि इख़फ़ा (छिपाकर दुआ करने के हुक्म) की तो बिल्कुल तामील नहीं होती क्यों कि जिसने अपना हाथ आसमान की तरफ़ उठाया उसने खुले तौर पर यह बात बतादी कि मैं अल्लाह पाक की दर्गाह में दुआ करता हूँ वह ***मा अन्ज़लल्लाहु*** (जो अल्लाह ने नाज़िल किया है) के ख़िलाफ़ अमल करता है। उस पर किसी हुक्म के करने की ज़रूरत नहीं है मगर इतनी बात तो ज़ाहिर है कि वह ***इन्नल्लाह ला युहिब्बुल मोतदीन*** के हुक्म में तो है।

लेकिन सज्दे में दुआ मांगने से ऊपर बयान किये गये दोनों आदेशों की तामील होजाती है, और आजिज़ी और छिपाव जिनसे ख़ुलूस ज़ाहिर होता है उन दोनों जीज़ौं पर अमल करने वाला होजाता है। इस लिये हमारी क़ौम का ख़ास यही अमल है कि हम सब सुजूद में दुआ करते हैं और उसकी ख़ास वजह यही है कि, एक तो अल्लाह तआला का जो आदेश और शिक्षा है उसकी इत्तिबाअ (अनुकरण) हौ जाए, और दूसरी यह कि ज़बरदस्त धम्की (चेतावनी) से जो, ***इन्नहु ला युहिब्बुल मोतदीन*** से ज़ाहिर हुई है उस से बच सकें और तीसरी यह कि उन सहीह अहादीस पर अमल हो जाए जो दुआ के सहीह तरीक़े (शुद्ध नियम) को साबित करती हैं यानि सुजूद में दुआ करना। मुख़्तसर यह कि दुआ के आदाब में क़तई अम्र जो तालीमे क़ुर्आनी का ख़ुलासा है वह यही है कि दुआ छिपा कर और आजिज़ी के साथ की जाए और उसी पर अमल करना वाजिब या मनदूब है।

Scanned with Cam

सज्दे में दुआ करने की ताकीद

अहादीसे सिहाह के मुलाहज़े से मालूम होता है कि आँहज़रत सल्लम ने ज़्यादा ताकीद इस अम्र की फ़रमाई है कि सुजूद में दुआ की जाए क्योंकि सज्दे की हालत में जो दुआ की जाती है वह क़ुबूलियत के लाइक़ है, जैसा कि *सुनन अबू दाऊद* में बयान किया गया है "यानि रसूलुल्लाह सल्लम फ़रमाते हैं कि बन्दा सज्दे की हालत में अल्लाह तआला से ज़ियादा क़रीब होजाता है इस लिये तुम सज्दे में ज़ियादा दुआ करो"।

ह०इब्ने अब्बास रज़ी० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ला० परदेह के बाहर निकले और नमाज पढ़ने वाले ह० अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ी० के पीछे सफ़ बांधे हुए खड़े थे। आप सल्ला० ने फ़रमाया कि नबूव्वत की बशारतों में से सिर्फ़ उम्दा ख़ाब (उत्तम स्वप्न) बाक़ी रह गये हैं, मैं रूकू और सुजूद में कुरआन पढ़ने से मुमानियत (मना) किया गया हूँ, तुम रुकू में अल्लाह की ताज़ीम (बड़ाई बयाना) करो और सुजूद में दुआ करने की कोशिष करो क्योंकि यह दुआ कुबूलियत (स्वीकृती) के लाइक़ है। (सुनन् अबू दाऊद)

इस प्रकार की अधिक हदीसें आइशा सिधीक़ा रज़ी०, अबी हुरेराह रज़ी०, अली रज़ी०, जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ी० और मुहम्मद इब्ने सल्माह रज़ी० से सिहाह में बयान की गई हैं कि रसूलुल्लाह सल्ला० ख़ुद भी सज्दे में दुआ करते थे और उसी का हुक्म भी फ़रमाते थे। उपर कही गाई दोनों हदीसों से वाज़ेह (स्पष्ट) है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने सज्दे में दुआ करने का हुक्म लफ़्ज़े अम्र से (आदेशक रुप में) जारी फ़रमाया है, और हमारे मज़हब और हनफ़ियों का यह नियम है कि जो सेग़ए अम्र बिला क़रीनए मानिआ मौजूद हो तो वह सेग़ह हुकम के वाजिब होने पर दलालत करेगा। अगरचे हुक्म का वुजूब (वाजिब होना) उसके बग़ौर भी हो जाता है मगर उस सिफ़त (घुण) के सेग़ए अम्र से तो ज़रुर वुजूब साबित होगा। इस लिये इस

Scanned with Cam

ज़ाबिते (नियम) के अनुसार हमारा यह मज़्हब है कि सुजूद में दुआ करना वाजिब है। जब बन्दे ने सज्दे की हालत में दुआ की या करता है तो गोया वह हुक्मे वाजिब की तामील करता है। इस सूरत में यह कहना ग़लत है कि महेदवी दुआ नहीं करते क्योंकि वह दुआ करते समय हाथ नहीं उठाते। जब दुआ करने के कई तरीक़े (नियम) बयान किये गये है और उन सब तरीक़ों में यह तरीक़ा दुआ की क़बूलियत का आला ज़रीआ (सर्वोच साधन) है तो इसी तरीक़े को अख़्ज़ (ग्रहण) करना ज़ियादा मुस्तहसन (उत्तम) है। हदीस की मशहूर पुस्तक *अबू दाऊद* की शर्ह (व्याख्या) *मिरक़ातुस सऊद* में लिखा है :

ईरीक ने *शर्ह तिरमिज़ी* में ज़िक्र किया है कि उस में कई उमूर (विषय) हैं.

(१) पहला यह कि बन्दे को सज्दे में ज़ियादा दुआ करने का हुक्म दिया गया है जैसा कि हदीस का आख़री जुमला (वाक्य) यही है और अल्लाह तआला सवाल (प्रार्थना) करने वालों से नज़दीक (निकट) है, जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है: और जब तुम से (ऐ मुहम्मद) मेरी हालत के सम्बंध में मेरे बन्दे पूछें तो तुम कहो मैं नज़दीक हूँ, दुआ मांगने वाले की दुआ स्वीकार करता हूँ जब वह मुझ से दुआ मांगता है। (२:१८६)

(२) दूसरा यह कि सुजूद की हालत डर, ज़िल्लत और इन्किसारी (नम्रता) की हालत है क्यों कि सज्दा करने वाला अपना मूंह ख़ाक आलूद करता है और इब्ने मसऊद रज़ी० ने फ़रमाया है कि अल्लाह तआला को बन्दे की आम हालतों में से यही हालत ज़्यादा पसंद है जब उसका बन्दा उसके आगे अपना मूहँ ख़ाक आलूद करता है। तब्रानी ने यह रिवायत की है।

Scanned with Cam

(३) तीसरा यह कि सज्दा पहली इबादत है जिसका अल्लाह तआला ने आदम अले० को पैदा करने के बाद हुक्म फ़रमाया है। इस लिये इस इबादत के ज़रीए से अल्लाह तआला से क़ुर्बत (सामीप्य) चाहने वाला दूसरी इबादत के ज़रीऐ से नज़दीकी चाहने वाले से अक़्रब (अत्यंत निकट) होगा।

(४) चौथा यह कि सुजूद में इब्लीस की मुख़ालिफ़त (विरोध) है क्योंकि उसका सब गुनाहों से पहले यही गुनाह है कि उसने हज़रत आदम अले० को सज्दा नहीं किया और बड़ाई से अल्लाह तआला की ना फ़रमानी (अवज्ञा) की। मतलब यह है कि इराक़ी की राय से यह बात मालूम होती है कि सुजूद में दूआ बेहतर (उत्तम) है क्योंकि इसी हालत में वूजूहे मज़्कूरा (चर्चित कारण) पाये जाते हैं।

तफ़्सीर *मआलिमुत तन्ज़ील* के लेखक (अबू मुहम्मद हुसेन बग़वी - मृ-५१० हिज्री) ने भी अबू हुरेरा रज़ी० से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह सल्लम ने फ़रमाया कि बन्दा सज्दे की हालत मे अल्लाह से ज़्यादा क़रीब होता है इस लिये सज्दे में ज़ियादा दुआ करो। इस हदीस को तफ़सीर मआलिम के लेखक ने सूरह अलक़ की आयत *वस्जुद वक़्तरिब* (सज्दा कर और नज़दीक होजा) की तफ़्सीर में ज़िक्र फ़रमाया है और इस आयत का विषय यही बताया है कि सज्दे में दुआ करना चाहिये। *तफ़्सीर बैज़ावी* के लेखक ने भी इस आयत की तफ़्सीर (टीका) में यही चर्चा की है। अल्लामाह जारूल्लाह ज़मख़शरी (मृत्यु ५३८ हिज्री) और *तफ़्सीरे नेशापूरी* के लेखक (निज़ामुद्दीन हसन बिन मुहम्मद ख़ुरासानी नेशापूरी) की भी यही राय है। हज़रत इमाम फ़ख़रूद्दीन राज़ी (मृ-६०६ हिज्री) ने भी इस आयत की तफ़्सीर में ज़िक्र फ़रमाया है कि जब बन्दा अल्लाह तआला को सज्दा करता है तो बहुत ही क़रीब होजाता है और चूंकि

Scanned with Cam

दुआ के लिये क़ुर्बत के औक़ात की ज़्यादा ज़रुरत है इस लिये उसी वक़्त में दुआ बेहतर होगी।

तफ़्सीर *सिराजुल मुनीर* के लेखक (शम्सुद्दीन मुहम्मद अल-ख़तीब अल-शरबीनी- मृ - ९७७ हिज्री) ने इस आयत की तफ़्सीर में बयान किया है "अल्लाह तआला से दुआ और ताअत (आज्ञापालन) के ज़रीए नज़्दीक हो जाओ। रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया है कि रुकू में रब की ताज़ीम करो और सुजूद में दुआ की कोशिश करो क्यों कि वह दुआ क़बूल किये जाने के लाइक़ है और हज़रत सल्लम की यह आदत थी कि आप सज्दों मे रोते और आजज़ी करते थे, एक बार ह० आइशा रज़ी० ने कहा कि अल्लाह तआला ने आपके अगले और पिछले गुनाह मआफ़ फ़रमा दिये हैं फिर सुजूद में दुआ करने और इतना रोने की क्या ज़रूरत है, आपने फ़रमाया कि क्या मैं शाकिर (कृतज्ञ) बन्दा ना कहलाऊँ। और एक खियत में है कि बन्दा (दास -उपासक) सज्दे की हालत में अल्लाह तआला से ज़्यादा क़रीब होजाता है इस लिये सुजूद की हालत में दुआ ज़्यादा करो।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन के लेखक (अलाउद्दीन अबुल हसन अली बिन मुहम्मद) ने इस आयत के सम्बंध में लिखा है कि क़रीब होजा यानि अल्लाह से, फिर उन्हों ने वह हदीस बयान की है जो अबू हुरेरा रज़ी० ने रिवायत की है यानि बन्दा सज्दे की हालत में अल्लाह तआला से अधिक निकट होजाता है, इसलिए सुजूद की हालात में अधिक दुआ करो"।

तफ़्सीर मदारिक (लेखक - अबुल बरकात अब्दुल्लाह बिन अहमद बिन महमूद नसफ़ी - मृ ७१० हिज्री) में लिखा है कि तुम ख़ुद को सज्दे में अल्लाह से नज़्दीक करलो क्योंकि बन्दा जब सज्दा करता है तो अपने रब से ज़्यादा क़रीब होजाता है।

Scanned with Cam

इस लिये क़ुर्बत (सामीप्य) के समय ही दुआ करनी चाहीये ताकि स्वीकार होसके। अगर यह एतराज़ किया जाये कि दुआ से इज्ज़ (नम्रता) का इज़हार और मुद्दआ तलब करना मक़सूद (उद्देशय) है और हाथ उठाकर दुआ करने से इज्ज़े मालूम होजाता है इस लिये हाथ उठाना ज़रुरी है, तो उसका जवाब यह है कि बेशक दुआ में इज्ज़ का इज़्हार और इख़्लास ज़रुरी है और यह दोनों चीज़ें सज्दे में दुआ करने से हासिल होती हैं. क्योंकि ज़ाहिर है कि सज्दे में यानि सर रगड़ने में कमाले इज्ज़ (पूर्ण नम्रत) है जो हाथ उठाने में नहीं है और ख़ुलूस भी सज्दे में दुआ करने से साबित होगा क्योंकि ख़ुलूस के लिय इख़्फ़ा (छिपाव) शर्त है और सब जानते हैं कि हाथ उठाकर दुआ मांगने में इख़्फा नहीं है। मतलब यह कि इख़्फ़ा में ही ख़ुलूस है, जैसा कि बैज़ावी ने लिखा है कि बेशक इख़्फ़ा ख़ुलूस की दलील है। इस से पहले इसका बयान होचुका है।

हाथ उठाकर दुआ करने की मनाहि

बाज़ बुज़र्गाने दीन की बयान की हुई रिवायतों से यह समझ में आता है कि हाथ उठाकर दुआ करना सख़्त मना है। अल्लामाह अएनी ने *उम्दतुल क़ारी शर्हुल बुख़ारी* में लिखा है शोबा ने क़तादा से रिवायत की है कि इब्ने उमर रज़ी० ने एक क़ौम को हात उठाकर दुआ करते देखा तो फ़रमाया कि यह लोग क्या चीज़ लेरहे हैं, अल्लाह की क़सम अगर यह ऊंचे पर्बत की चोटी पर होते तो भी अल्लाह से नज़्दीक न होते। इसका यह मतलब है कि हाथ उठाकर दुआ करने से दुआ करने वाला अल्लाह तआला से क़ुर्बत नहीं पैदा कर सकता।

दूसरा क़ौल यह है कि जुबेर इब्ने मुतइम ने हाथ उठाकर दुआ करने को मक्रूह (धृणित) जाना है और शरीह ने एक शख़्स को जो हाथ उठाकर

Scanned with Cam

दुआ कर रहा था यह फ़रमाया कि तेरी माँ मरजाये कि तू क्या कर रहा है और किस चीज़ को हासिल कर रहा है।

तीसरा क़ौल यह है कि मसरुक़ ने उन लोगौं को जो हाथ उठाकर दुआ करते थे यह फ़रमाया कि अल्लाह तआला तुम्हारे हाथ काट डाले। इस क़ौल से ज़ाहिर होता है कि हज़रत मसरुक़ ने हाथ उठाने से बहुत कराहियत (नफ़रत) की है।

शाफ़ई इमाम अल्लामाह इब्ने हजर अस्क़लानी (मृत्यु ८५२ हिज्री) ने *"फ़त्हुल बारी शर्हु सहीह बुख़ारी"* में लिखा है

"मुहम्मद इब्ने जरीर (मृत्यु ३१० हिज्री) कहते हैं कि इब्ने उमर और जुबेर इब्ने मुतइम ने दुआ के समय हाथ उठाने को मक्रूह बताया है। शरीह ने एक शख़्स को दुआ के समय हाथ उठाये हुए देखकर फ़रमाया कि अपने हाथ से किस चिज़ को लेता है और बद दुआ (शाप) दी। तबरी ने इन सारी रिवायतौं की अस्नादें भी लिखी हैं, और इब्नुत तीन ने अब्दुल्लाह बिन उमर बिन ग़ानम से यह रिवायत की है कि इमाम मालिक रहे० ने फ़रमाया है कि दुआ के समय हाथ उठाना फ़ुक़हा (धर्म शास्त्र के विधावान) का काम नहीं है"।

मतलब यह है कि हनफ़िया और शाफ़ईया और हज़रत इमाम मालिक रह० के क़ौल से साबित होता है कि दुआ के बक़्त हाथ उठाना मुस्तहसन (उत्तम) काम नहीं है।

दुआ की तीन क़िस्में

सुनन अबू दाऊद देखने से स्पष्ट होता है कि दुआ तीन प्रकार की है।

Scanned with Cam

१. इस्तिग़फ़ार	में शहादत की अंगुली (तर्जनी अंगुली) उठाई जाती है और बाक़ी अंगुलियाँ अपनी जगह पर रहती हैं।
२.मसअला	में हाथ उठाया जाता है।
३. इब्तिहाल	में भी हाथ उठाना चाहिये मगर उस में हाथों का लम्बे करना भी ज़रुरी है जैसा कि इब्ने अब्बास रज़ी० ने यह रिवायत की है कि मसअला में दोनों हाथ और कन्धे एक हद तक उठाऐ जाते है, और इस्तिग़फ़ार में शहादत की एक उंगुली से इशारा किया जाता है और इब्तिहाल में दोनों हाथ पूरी तरह उठाकर फैलाये जाते हैं।

लेकिन इस फ़र्क़ व इम्तियाज़ (अन्तर) से चूँकि लोग परिचित नहीं हैं इस लिये उनके अमल से इस्तिग़फ़ार और मसअले में फ़र्क़ नहीं मालूम होसकता बल्कि ऐसा मालूम होता है कि दोनों सूरतों में ज़रुरी तौर पर हाथ उठाए जाते हैं जो उस हदीस के मन्शाए क़ुदसी (पवित्र उद्देश्य) के ख़िलाफ़ है। वाज़ेह हो कि दुआ का अर्थ उपर बताये गये विषयों में मुन्हसिर है, यानि उसमें इस्तिग़फ़ार होग या किसी चीज़ की तलब, अब तलब (मांगने) की दो सूरतें हैं, एक यह कि केवल सवाल होगा या कि मुख़ालिफ़ के मुक़ाबले में विजय, ज़ाहिर है कि पहली क़स्मि तो इस्तिग़फ़ार है जिस में उस हदीस के मन्शा के मुवाफ़िक सिर्फ़ शहादत की अंगुली उठानी चाहिये और दूसरी क़िस्म मसअला है जिस में हाथ उठाये जाते हैं लेकिन हाथ लम्बे नहीं किये जाते, और तीसरी क़िस्म इब्तिहाल है जिसमें हाथ उठाकर ऊपर लम्बे किये जाते हैं। इस लिये जिन अहादीस में हाथ उठाने का ज़िक्र किया गया है वह अस्ल में दूसरी क़िस्म से समबंधित हैं यानि मसअला हैं। मतलब यह है कि दुआ का अर्थ यही क़िस्में हैं और तीनों क़िस्में उस की एकाई हैं।

Scanned with Cam

पहली क़िस्म की हमेशा ज़रुरत है क्योंकि उस अमल के करने के लिये क़ुरआन में आदेश मौजूद हैं और सहीह हदीसें उसकी मुऐइद (समर्थक) हैं, इस लिये हमारे मज़हब में इस्तिग़फ़र ज़रुरी अम्र है। अब रही दूसरी क़िस्म यानि मसअला तो यह अमल इस वज्ह से मत्रूक (अप्रचलित) है कि यह तवक्कुल के मुनाफ़ी (विरुद्ध) है और ज़ाहिर है कि तवक्कुल के सम्बंध में सरीह (स्पष्ट) आयतें मोजूद हैं। जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है।

१. **वमा मिन दाब्बतिन फ़िल अर्ज़ि इल्ला अलल्लाहि रिज़्कुहा** (हूद - ६) (और कोई नहीं पाँव चलने वाला ज़मीन पर मगर अल्लाह पर है उसकी रोज़ी)।

२. **व मैं यतवक्कल अलल्लाहि फ़हुवा हस्बुहु** (अत तल्लाक़ - ३) (और जो कोई विश्वास रखे अल्लाह पर तो उसको काफ़ी है उसका निशिचत (अल्लाह)।

३. **फ़त्तख़िज़्हु वकीला** (अल मुज़म्मिल - १) (उसी को अपना कारसाज़ बनाओ)

४. **फ़तवक्कल अलल्लाहि** (अले इम्रानन - १५९) (तू विश्वास कर अल्लाह पर)

इन दोनों आयतों में अम्र (आदेश) के सेग़े मौजूद हैं और इनके सिवा दूसरी आयात भी इनके समर्थक हैं। इन ही आयात की रु से हमारे मज़्हब में तवक्कुल फ़र्ज़ है। इस लिये जब मसअला यानि सवाल करना साफ़ तौर पर तवक्कुल की आयत के विरुद्ध है तो सिर्फ़ मसअले को हमारे मज़्हब ने मना किया है। गो कि इस्तिग़फ़ार भी तवक्कुल के विरुद्ध है लेकिन चूँकि उसकी तालीम में कुरआनी अहकाम मौजूद् हैं और उनमें भी अम्र के सेग़े वारिद हैं इस लिये उसकी तामील ज़रुरी है।

Scanned with Cam

ज़ईफ़ और क़वी अहादीस

बाज़ लोगौं का यह ख़याल है कि दुआ की मुस्बित (प्रमाणित करने वाली) अहादीस अगरचे ज़ईफ़ (दुर्बल) हैं मगर उन आमाल में जो उसूले दीन (धर्म के मूल नियम) से न हों अहादीसे ज़ईफ़ा इस्तिदलाल (तर्क) के क़ाबिल (सिद्ध करने के लिये उपयोगी) हैं और कुछ बड़े महत्व के आमाल में उन से इस्तिदलाल उचित है। मेरी राय में यह बात बहुत ही कमज़ोर और तर्मीम (संशौधन) के क़ाबिल है। इसकी तौज़ीह (स्पष्टता) यह है कि फ़ज़ाइले आमाल (महत्व के कार्य) में ज़इफ़ अहादीस से इस्तिदलाल उस स्थिति में उजित है कि जब उन पर सहीह अहादीस से इस्तिदलाल न होसकता हो और अगर उनकी मुस्बित अहादीसे सहीहा मौजूद हों तो उस सूरत में उन पर ज़ईफ़ अहादीस से इस्तिदलाल जाइज़ नहीं है और हमारा मज़हब भी यही है। मसलन फ़र्ज़ कीजिये कि नमाज़ के बात दुआ में हाथ उठाने के सम्बंध में ज़ईफ़ अहादीस बयान की हुई मिलती हैं और सज्दे में दुआ करने के विषय मे सहीह और क़वी हदीसें मिलती हैं और दुआ अहम आमाल से है तो उस के अदा करने में उन ही अहादीस पर अमल करना चाहिये जो क़वी और सहीह हदीसों से साबित हुवा है। इस लिये दुआ सज्दे में करनी चाहिये क्यों कि उसके सुबूत में जो अहादीस हैं वह क़वी और सहीह हैं। इस लिये नववी वग़ैरह का यह क़ौल कि अहम आमाल में ज़ईफ अहादीस इस्तिदलाल के क़ाबिल हैं बहस के क़ाबिल है।

वल्लाहु आलम बिस्सवाब

Scanned with Cam